नेशनल टेक्सटाइल कॉर्पोरेशन लिमिटेड व अन्य

बनाम

मेसर्स हरिबॉक्स स्वालरम व अन्य

अप्रैल 5, 2004

[एस. राजेंद्र बाबू तथा जी. पी. माथुर, न्यायाधिपतिगण]

भारत का संविधान, *1950 :* अनुच्छेद *226*

वाद हेतुक – क्षेत्राधिकार – उत्पन्न करने वाले तथ्य – प्रतिपादित: मात्र उन्ही तथ्यों से न्यायालय के क्षेत्राधिकार के भीतर वाद-हेतुक उत्पन्न होता है जिनका प्रकरण में लिप्त मामले के साथ कोई संबंध या प्रासंगिकता हो।

रिट याचिका – पोषणीयता – तथ्य के विवादग्रस्त प्रश्न – देरी व समयावधि बीतना – प्रतिपादित: तथ्य के अतिविवादग्रस्त प्रश्न एक उचित रूप से गठित वाद में साक्ष्य प्रस्तुत कर सिद्ध किये जा सकते थे, व जिस मामले की जांच रिट याचिका में नहीं की जा सकती – अतः ऐसी रिट याचिका इस आधार पर व विलम्ब के आधार पर खारिज होने योग्य है।

परमादेश – जारी करना – इसके आधार – व्यावसायिक संविदा – प्रतिपादित: परमादेश जारी करने हेतु यह दर्शित किया जाना आवश्यक है कि एक विधि के अंतर्गत विधिक कर्तव्य थोपा गया है और पीड़ित पक्ष के

पास इस विधि के अंतर्गत इस कर्त्तव्य की अनुपालना के प्रवर्तन का विधिक अधिकार है–

के प्रकरण में परदेश जारी नहीं किया जा सकता।

कपड़ा उपक्रम *(प्रबंध-ग्रहण)* अधिनियम, *1983:*

धारा *3(7)* – अधिग्रहण और मांग – "दायित्व" – प्रवर्तन – प्रतिपादित: कपड़ा कंपनी द्वारा नियत दिन से पूर्व उपगत दायित्व केंद्र सरकार या संरक्षक के विरूद्ध प्रवर्तनीय नहीं होगा।

शब्द और वाक्यांश:

"दायित्व" – का अर्थ – कपड़ा उपक्रम *(प्रबंध-ग्रहण)* अधिनियम, *1983* की धारा *3(7)* के सन्दर्भ में।

प्रत्यर्थीगण बॉम्बे में स्थित दो कपडा मिलों से विभिन्न मात्रा में कपड़ा खरीदते रहे थे। प्रत्यर्थीगण द्वारा संविदाएं की जाकर उनके अनुक्रम में अग्रिम भुगतान किया गया था। संबंधित मिलों द्वारा समय-समय पर प्रत्यर्थीगण को माल का प्रदाय व परिदान ज़रूर किया गया परन्तु संविदा का एक सारवान भाग निष्पादित नहीं किया गया था। प्रत्यर्थीगण द्वारा मिलों से अनुरोध किया गया कि वे माल के तत्काल परिदान के लिए आवश्यक कदम उठाएं, जिसके संबंध में भुगतान पहले ही किया जा चुका था। मिलों ने सूचित किया कि मिलों के बैंकिंग संव्यवहार और खाते फ्रीज कर दिए जाने के कारण परिदान नहीं किया जा सका था, परन्तु आश्वासन

दिया गया कि माल को यथाशीघ्र पहुंचाने की व्यवस्था की जा रही है। केंद्र सरकार द्वारा कपड़ा उपक्रम (प्रबंध-ग्रहण) अध्यादेश, 1983 के अंतर्गत मिलों का प्रबंधन अपने हाथ में लिया गया था, जिसे बाद में कपड़ा उपक्रम (प्रबंध-ग्रहण) अधिनियम, 1983 द्वारा प्रतिस्थापित कर दिया गया। केंद्र सरकार द्वारा कपड़ा उपक्रमों के प्रबंधन के उद्देश्य से अपीलार्थी का गठन किया गया, जिसने अतिरिक्त संरक्षक के रूप में दोनों कपड़ा उपक्रमों का प्रबंधन संभाला। इसके पश्चात प्रत्यर्थीगण द्वारा माल प्राप्त करने हेतु अपीलार्थी से संपर्क किया गया और एक गांठ परिदत्त की गयी, लेकिन 12 गांठें आबकारी विभाग के अधिकारियों द्वारा रोक लिए जाने के कारण परिदत्त नहीं की गयीं।

तत्पश्चात, अपीलार्थीगण द्वारा जवाब प्रेषित कर कथित किया गया कि (1) समस्त बकाया संविदाएं प्रबंध-ग्रहण की दिनांक को रद्द कर दिए गए थे क्योंकि वे उन पर बाध्यकारी नहीं थे; (2) पूर्ववर्ती प्रबंधन के पास जो राशियां जमा की गई थीं, उन्हें पैक की गई सामग्री के किसी भी बीजक में विशेष रूप से अंकित नहीं किया गया था व इस कारण से भविष्य के किसी भी परिदान में इसे समायोजित नहीं किया जा सकता था, तथा प्रत्यर्थीगण को पूर्ववर्ती प्रबंधन से ही इस राशि का दावा करना होगा क्योंकि अभिरक्षक इस प्रबंध-ग्रहण से पूर्व की अवधि से सम्बंधित किसी भी दायित्व का निर्वहन करने से निषिद्ध है; तथा (3) ऐसा कोई बीजक

नहीं था जिसके विरुद्ध प्रबंध-ग्रहण से पूर्व याचिकाकर्ताओं से भुगतान प्राप्त किया गया था व इस प्रकार भुगतान किए गए स्टॉक का परिदान करने का प्रश्न ही नहीं उठता।

प्रत्यर्थीगण द्वारा व्यथित होकर कलकत्ता उच्च न्यायालय के समक्ष एक रिट याचिका दायर की गयी थी कि अपीलार्थी को परमादेश रिट जारी कर इस आशय का आदेश दिया जाए कि वह संविदाओं में वर्णनानुसार माल के परिदान के विधारण से संबंधित संपूर्ण अभिलेख प्रस्तुत करे।

अपीलार्थी द्वारा तर्क दिए गए कि वाद-हेतुक बॉम्बे में उत्पन्न होने के कारण कलकत्ता उच्च न्यायालय के पास रिट याचिका पर विचार करने का क्षेत्राधिकार नहीं है; यह कि रिट याचिका अत्यधिक विलम्ब से पेश की गयी है व तथ्य के विवादग्रस्त प्रश्न उठाये जाने के कारण पोषणीय नहीं है।

एकल न्यायाधीश ने यह माना कि कलकत्ता उच्च न्यायालय के पास रिट याचिका पर विचार करने का कोई क्षेत्राधिकार नहीं था। खंड पीठ ने इस निष्कर्ष को इस आधार पर अपास्त किया कि संविदा का प्रतिसंहरण कलकत्ता में हुआ, इस कारण वाद-हेतुक कलकत्ता में उत्पन्न हुआ था। खंड पीठ द्वारा यह भी माना गया की अपीलार्थी ही प्रत्यर्थीगण को कपडा परिदत्त करने हेतु ज़िम्मेदार है, न की दोनों कपडा मिलें। अतः, यह अपील।

अपील स्वीकार करते हुए न्यायालय द्वारा

प्रतिपादित: 1. रिट याचिका में कथित प्रत्येक तथ्य से यह निष्कर्ष पर नहीं निकाला जा सकता कि उन तथ्यों से न्यायालय के क्षेत्राधिकार के भीतर वाद-हेतुक उत्पन्न होता है, जब तक कि उन कथित तथ्यों का प्रकरण में लिस मामले के साथ कोई संबंध या प्रासंगिकता न हो। जिन तथ्यों का प्रकरण में लिस मामले या विवाद से कोई व्यवहार नहीं है, उनसे वाद-हेतुक उत्पन्न नहीं होता है जिससे कि संबंधित न्यायालय को क्षेत्राधिकार प्राप्त हो सके।

भारत संघ बनाम अडानी एक्सपोर्ट्स, ***AIR (2002) SC 126,*** राजस्थान राज्य बनाम मैसर्स स्वेका प्रॉपर्टीज, ***AIR (1985) SC 1289,*** तथा ऑयल एंड नेचुरल गैस कमीशन बनाम उत्पल कुमार बसु, ***[1994] 4 SCC 711,*** आश्रित।

2.1 हस्तगत प्रकरण में वस्त्र मिलें बॉम्बे में स्थित हैं और कपड़े का प्रदाय उनके द्वारा बॉम्बे में स्थित कारखाने पर किया जाना था। रिट याचिकाकर्ताओं के अनुसार पैसे का भुगतान बॉम्बे स्थित मिलों को किया गया था। विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा मामले पर विस्तृत चर्चा के बाद यह माना गया कि कलकत्ता उच्च न्यायालय के पास रिट याचिका पर विचार करने का कोई क्षेत्राधिकार नहीं था। खंड पीठ ने इस निष्कर्ष को इस आधार पर उलट दिया कि संपन्न संविदा अस्तित्व में आ गयी थी जिसे सुनवाई का अवसर देने के पश्चात ही रद्द किया जा सकता है, और

परिणामस्वरूप, उसके कलकत्ता पते पर संविदा को रद्द करने का प्रश्न वाद-हेतुक गठित करेगा। हमारे मत में खंड पीठ द्वारा लिया गया दृष्टिकोण विधिक रूप से पूरी तरह त्रुटिपूर्ण है। रिट याचिका में यह कहीं भी कथित नहीं किया गया है कि अपीलार्थी द्वारा संविदा रद्द करने के लिए रिट याचिकाकर्ता को कोई नोटिस जारी करके इस अधिनियम की धारा 11 के अंतर्गत कोई कार्रवाई अमल में लायी गयी थी। दरअसल, याचिका के मद सं 18 में कथित है है कि केंद्र सरकार ने संविदा रद्द करने के लिए धारा 11 में निर्धारित प्रक्रिया का पालन नहीं किया।

2.2 मात्र यह तथ्य कि रिट याचिकाकर्ता कलकत्ता में कारोबार करता है या उसके द्वारा किए गए पत्राचार का जवाब कलकत्ता में प्राप्त हुआ था, वाद-हेतुक का अभिन्न अंग नहीं है, और इसलिए कलकत्ता उच्च न्यायालय के पास रिट याचिका पर विचार करने का कोई क्षेत्राधिकार नहीं था, और खंड पीठ द्वारा इसके विपरीत लिया गया दृष्टिकोण पोषणीय नहीं है।

3.1 अधिनियम की धारा 3(7) बहुत स्पष्ट है और निश्चित शब्दों में कहता है कि कपड़ा उपक्रम के संबंध में कपड़ा कंपनी द्वारा उपगत कोई भी दायित्व केंद्र सरकार या संरक्षक के विरूद्ध प्रवर्तनीय नहीं होगा।

3.2 नियत दिन से पहले कपड़ा उपक्रम के संबंध में कपड़ा कंपनी द्वारा उपगत प्रत्येक दायित्व धारा 3 की उप-धारा (7) में प्रयुक्त "कोई भी दायित्व" शब्द, जिसका कि व्यापक आयाम है, की परिधि में आता है।

राष्ट्रीय मिल मजदूर संघ बनाम नेशनल टेक्सटाइल कॉरपोरेशन *(*दक्षिण महाराष्ट्र*)* लिमिटेड, **[1996] 1 SCC 313,** आश्रित।

3.3 रिट याचिकाकर्ताओं द्वारा कायम प्रकरण के अनुसार उनके द्वारा नियत दिन से पूर्व दो कपड़ा मिलों को पैसे का भुगतान किया गया था, लेकिन वे कपड़े का प्रदाय करने में विफल रहे थे। यदि उपरोक्त स्थिति को सही माना जाए, तो पैसे प्राप्त होने के पश्चात कपड़ा मिलों द्वारा देनदारी का दायित्व उपगत होने के कारण रिट याचिकाकर्ताओं को कपड़े का प्रदाय करने का कर्त्तव्य था। प्रस्तुत तथ्यों के अनुसार कपड़ा कंपनी द्वारा उपगत दायित्व था, और परिणामस्वरूप, यह केंद्र सरकार या संरक्षक के विरूद्ध प्रवर्तनीय नहीं हों सकता था। उच्च न्यायालय की खंडपीठ का यह दृष्टिकोण स्वीकार नहीं किया जा सकता कि यह कपड़ा कंपनी का दायित्व नहीं था।

4.1 रिट याचिका में तथ्य के अतिविवादग्रस्त प्रश्न उठाए गए थे जो कि एक उचित रूप से गठित वाद में साक्ष्य प्रस्तुत कर सिद्ध किये जा सकते थे, व जिस मामले की जांच रिट याचिका में नहीं की जा सकती थी।

4.2 रिट याचिका अत्यधिक विलम्ब से दायर की गई थी, इसलिए याचिका इसी आधार मात्र पर ही खारिज होने योग्य थी।

5. यह सुस्थापित है कि किसी अधिकारी को कुछ करने के लिए मजबूर करने के लिए एक परमादेश तब ही जारी किया जाना चाहिए, जब यह दर्शित किया गया हो कि एक विधि के अंतर्गत विधिक कर्तव्य थोपा

गया है और पीड़ित पक्ष के पास इस विधि के अंतर्गत इस कर्त्तव्य की अनुपालना के प्रवर्तन का विधिक अधिकार है। हस्तगत प्रकरण एक शुद्ध एवं सरल व्यवसायिक संविदा का है। रिट याचिकाकर्ताओं के पास कोई वैधानिक अधिकार नहीं है और न ही अपीलार्थीगण पर कोई वैधानिक कर्तव्य थोपा गया है जिसकी अनुपालना का विधिक प्रवर्तन किया जा सकता हो। इसलिए, जैसा कि रिट याचिकाकर्ताओं ने प्रार्थना की है, कोई परमादेश रिट जारी नहीं किया जा सकता है।

सिविल अपील क्षेत्राधिकार : सिविल अपील संख्या 3142-43/2002 ।

कलकत्ता उच्च न्यायालय के मूल आदेश से अपील संख्या 457 तथा 459, वर्ष 1997 में पारित निर्णय व आदेश दिनांक 4.8.2000 के विरूद्ध।

साथ

सि. अ. संख्या 3144/2002 ।

के.एन.रावल, महान्यायभिकर्ता तथा सुश्री बी. सुनीता राव, अपीलार्थीगण की ओर से।

डॉ. जी. सी. भरूका, रितेश अग्रवाल, देवाशीष भरूका, विश्वजीत सिंह, त्रिपुरारी रे तथा सुश्री रूबी सिंह आहूजा (एनपी), प्रत्यर्थीगण की ओर से।

न्यायालय का निर्णय न्यायाधिपति जी. पी. माथुर द्वारा पारित किया गया।

1. ये अपीलें कलकत्ता उच्च न्यायालय की एक खंड पीठ के निर्णय व आदेश दिनांक 4.8.2000 के विरूद्ध विशेष अनुमति द्वारा दायर की गई हैं। उक्त आदेश व निर्णय में खंड पीठ द्वारा प्रत्यर्थीगण सं 1 और 2 द्वारा की गयी अपील स्वीकार की जाकर विद्वान एकल न्यायाधीश के रिट याचिका को खारिज करने के आदेश दिनांक 11.4.1997 को अपास्त किया गया तथा रिट याचिका का कुछ निर्देशों सहित निस्तारण किया गया था।

2. प्रत्यर्थीगण सं 2 और 3 द्वारा यह प्रार्थना करते हुए रिट याचिका दायर की गयी थी कि अपीलार्थी को परमादेश रिट जारी कर इस आशय का आदेश दिया जाए कि वह रिट याचिका के अनुबंध-ए में उल्लिखित संविदाओं में वर्णनानुसार माल के परिदान के विधारण से संबंधित संपूर्ण अभिलेख प्रस्तुत करे, तथा उनके द्वारा किए गए अग्रिम भुगतान के समायोजन पर अनुबंध-ए में उल्लिखित माल का परिदान भी करे। यह भी प्रार्थना की गई थी कि अपीलार्थीगण को पत्र दिनांक 24.10.1989 (रिट याचिका का अनुबंध-ए) में परिकल्पित अंतिम निर्णय लेने के लिए निर्देशित किया जाए तथअपीलार्थीगण को निषेधाज्ञा से पाबन्द किया जाए कि रिट याचिकाकर्ता सं. 1 को प्रदाय किये जाने वाले माल को रखे बिना अनुबंध-ए

में उल्लिखित संविदाओं में वर्णनानुसार माल का अंतरण, लेनदेन या निस्तारण न करें।

3. रिट याचिका में स्थापित मामला इस प्रकार है कि रिट याचिकाकर्ता बॉम्बे में स्थित फिनले मिल्स लिमिटेड और गोल्ड मोहर मिल्स लिमिटेड से विभिन्न मात्रा में कपड़ा खरीदते रहे थे। याचिकाकर्ताओं द्वारा रिट याचिका के अनुबंध-ए में वर्णित संविदाएं की जाकर उनके अनुक्रम में अग्रिम भुगतान किया था। संबंधित मिलों द्वारा समय-समय पर याचिकाकर्ताओं को माल का प्रदाय व परिदान ज़रूर किया गया परन्तु संविदा का एक सारवान भाग निष्पादित नहीं किया गया था। पत्र दिनांक 26.9.1993 के द्वारा मिलों से अनुरोध किया गया कि वे माल के तत्काल परिदान के लिए आवश्यक कदम उठाएं, जिसके संबंध में भुगतान पहले ही किया जा चुका था। मिलों ने अपने पत्र दिनांक 29.9.1993 द्वारा सूचित किया कि मिलों के बैंकिंग संव्यवहार और खाते फ्रीज कर दिए जाने के कारण परिदान नहीं किया जा सका था, परन्तु आश्वासन दिया गया कि माल को यथाशीघ्र पहुंचाने की व्यवस्था की जा रही है। केंद्र सरकार द्वारा 18.10.1993 को कपड़ा उपक्रम (प्रबंध-ग्रहण) अध्यादेश, 1983 के अंतर्गत मिलों का प्रबंधन अपने हाथ में लिया गया था, जिसे बाद में कपड़ा उपक्रम (प्रबंध-ग्रहण) अधिनियम, 1983 द्वारा प्रतिस्थापित कर दिया गया। केंद्र सरकार द्वारा कपड़ा उपक्रमों के प्रबंधन के उद्देश्य से नेशनल टेक्सटाइल

कॉर्पोरेशन (दक्षिण महाराष्ट्र) लिमिटेड का गठन किया गया, जिसने अतिरिक्त संरक्षक के रूप में दोनों कपड़ा उपक्रमों का प्रबंधन संभाला। इसके पश्चात रिट याचिकाकर्ताओं द्वारा माल प्राप्त करने हेतु अपीलार्थीगण से संपर्क किया गया, जिसके अनुक्रम में संविदानुसार एक गांठ परिदत्त की गयी, लेकिन 12 गांठें आबकारी विभाग के अधिकारियों द्वारा रोक लिए जाने के कारण परिदत्त नहीं की गयीं। नेशनल टेक्सटाइल कॉर्पोरेशन (दक्षिण महाराष्ट्र) ने दिनांक 15.3.1984 के पत्र द्वारा गोल्ड मोहर मिल्स और गोल्ड मोहर मिल्स सहित प्रबंध-गृहीत मिलों के विशेष कर्तव्य अधिकारी से निर्धारित प्रारूप में विवरण प्रस्तुत करने का अनुरोध किया ताकि वह इस मामले को केंद्रीय के समक्ष उठा सके, तथा सरकार द्वारा इस अधिनियम की धारा 11(1) के अंतर्गत प्रबंध-ग्रहण करने से पूर्व किए गए किसी भी संविदा या समझौते को रद्द या परिवर्तित करने की कार्रवाई की जा सके, जो कि कार्यवाही 14.4.1984 को या उससे पूर्व की जानी थी। संबंधित पक्षों को सुनवाई का उचित अवसर देने के पश्चात कपड़ा मिलों द्वारा रिट याचिकाकर्ताओं को प्रबंध-ग्रहण से पूर्व किये गए संविदाओं को सत्यापित करने हेतु बुलाया जाकर संयुक्त बैठकें आयोजित की गयीं, तथा मामला विशेष कर्तव्य अधिकारी को पुनःप्रेषित कर दिया गया। तब रिट याचिकाकर्ताओं ने अपने पत्र दिनांक 13.10.1984 द्वारा नेशनल टेक्सटाइल कॉर्पोरेशन (दक्षिण महाराष्ट्र) लिमिटेड के अध्यक्ष एवं प्रबंध निदेशक से

लंबित संविदाओं के संदर्भ में कपड़े की शेष मात्रा परिदत्त करने तथा अग्रिम भुगतान के रूप में अदा की गयी समस्त राशियों को समायोजित करने का अनुरोध किया। अपीलार्थीगण द्वारा 7.11.1994 को जवाब प्रेषित कर कथित किया गया कि (1) समस्त बकाया संविदाएं प्रबंध-ग्रहण की दिनांक को रद्द कर दिए गए थे क्योंकि वे उन पर बाध्यकारी नहीं थे; (2) पूर्ववर्ती प्रबंधन के पास जो राशियां जमा की गई थीं, उन्हें पैक की गई सामग्री के किसी भी बीजक में विशेष रूप से अंकित नहीं किया गया था व इस कारण से भविष्य के किसी भी परिदान में इसे समायोजित नहीं किया जा सकता था, तथा रिट याचिकाकर्ताओं को पूर्ववर्ती प्रबंधन से ही इस राशि का दावा करना होगा क्योंकि अभिरक्षक इस प्रबंध-ग्रहण से पूर्व की अवधि से सम्बंधित किसी भी दायित्व का निर्वहन करने से निषिद्ध है; तथा (3) ऐसा कोई बीजक नहीं था जिसके विरुद्ध प्रबंध-ग्रहण से पूर्व याचिकाकर्ताओं से भुगतान प्राप्त किया गया था व इस प्रकार भुगतान किए गए स्टॉक का परिदान करने का प्रश्न ही नहीं उठता। रिट याचिकाकर्ताओं द्वारा कई अभ्यावेदन दिए गए तथा उन्हें पत्र दिनांक 4.10.1989 द्वारा सूचित किया गया कि प्रबंध-ग्रहण से पूर्व के संविदाओं के अनुसरण में कपड़े के परिदान से संबंधित मामला सक्रिय रूप से विचाराधीन था। परन्तु, किसी प्रकार का परिदान नहीं किया गया। इसके पश्चात इस निर्णय के पूर्वतर भाग में

उल्लिखित अनुतोष की प्रार्थना करते हुए दिसंबर, 1989 में रिट याचिका दायर की गई।

4. अपीलार्थीगण द्वारा रिट याचिका का विरोध किया गया और नेशनल टेक्सटाइल कॉरपोरेशन (दक्षिण महाराष्ट्र) लिमिटेड के प्रधान अधिकारी ने एक विस्तृत काउंटर शपथ-पत्र प्रस्तुत किया। इस काउंटर शपथ-पत्र के मद सं. 3 में दिए गए कुछ तर्कों का महत्वपूर्ण आचरण होने के कारण इसे पुनः प्रस्तुत किया जा रहा है

> "पैरा 3. आरंभ में मैं इस प्रकार कहता हूं:-
>
> (ए) रिट याचिका को विवादित अनुबंधों के विशिष्ट निष्पादन को प्राप्त करने के लिए निर्देशित किया जा रहा है और इसके लिए एक डिक्री का दावा किया जा रहा है जिसे एक नियमित मुकदमा दायर करके प्राप्त किया जा सकता है और किया जाना चाहिए, इसके अलावा यह तथ्यों के बहुत से विवादित प्रश्नों से संबंधित है, यह मुकदमे की उक्त सामान्य प्रक्रिया द्वारा पारित करने के लिए आवेदन कायम करने योग्य नहीं है और उस आधार पर इसे खारिज कर दिया जाना चाहिए।
>
> (बी) माना जाता है कि विचाराधीन अनुबंध बॉम्बे में स्थित कंपनियों के साथ बॉम्बे में किया गया था, जो बॉम्बे

से वितरित किए जाने वाले माल से संबंधित था और उसके संबंध में भुगतान बॉम्बे में किया जाना आवश्यक था और जिसका कुछ हिस्सा वास्तव में किया गया था बॉम्बे में भुगतान किया गया, रिट याचिका का विषय होने के कारण कार्रवाई का संपूर्ण कारण, यदि उत्पन्न हुआ था, तो बॉम्बे उच्च न्यायालय के अधिकार क्षेत्र के भीतर उत्पन्न हुआ था। तदनुसार, कार्रवाई के ऐसे कारण को लागू करने की मांग करने वाली तत्काल रिट याचिका, जो पूरी तरह से उक्त क्षेत्राधिकार के बाहर उत्पन्न हुई है, कलकत्ता उच्च न्यायालय में लागू करने योग्य नहीं है, न ही कलकत्ता उच्च न्यायालय के पास उस पर अधिकार क्षेत्र है। इसलिए, आवेदन गलत है और रखरखाव योग्य नहीं है।

(सी) माना जाता है कि रिट याचिका में निहित कार्रवाई का कारण 1983 में उत्पन्न हुआ था जब टेक ओवर अधिनियम लागू हुआ था और छह साल की लंबी अवधि की समाप्ति के बाद 1989 में लागू करने की मांग की गई थी, स्पष्ट रूप से विलंबित है। आवेदक भी कुंडी का दोषी होने के कारण रिट याचिका में कोई राहत नहीं दी जानी चाहिए, जो केवल सतर्क व्यक्ति की मदद करती है, पहचान

की नहीं। इसके अलावा, आवेदन परिसीमा कानून द्वारा भी वर्जित है और इसे खारिज कर दिया जाना चाहिए।"

यह भी तर्क दिए गए थे कि नियत तिथि पर कोई भी माल निर्मित, चिन्हित और परिदान के लिए तैयार नहीं था, जैसा कि रिट याचिकाकर्ताओं ने दावा किया था, और किसी भी कथित संविदा के अंतर्गत किसी शेष माल को परिदत्त करने का कोई प्रश्न ही नहीं उत्पन्न होता। रिट याचिकाकर्ताओं को जो भी माल परिदत्त किया गया, उस चिन्हित माल के बीजक जारी किये जा चुके थे जिसके लिए भुगतान पहले ही प्राप्त हो चुका था और जिसके संबंध में स्वामित्व पहले ही रिट याचिकाकर्ताओं को दे दिया गया था। अन्यों के संबंध में भी इसी तरह की प्रक्रिया अपनाई जाकर उन्हें कपड़ा परिदत्त किया गया था जो उनके खाते में निर्मित पड़ा हुआ था। हालाँकि, आगे कोई सामान परिदत्त करने के लिए उत्तरदायी नहीं थे। जैसा कि रिट याचिकाकर्ताओं द्वारा आरोप लगाया गया था, प्रत्यर्थीगण को कोई अग्रिम भुगतान प्राप्त नहीं हुआ था। यह भी तर्क दिया गया कि इस अधिनियम के प्रावधानों के अंतर्गत प्रत्यर्थी प्रबंध-ग्रहण से पूर्व की अवधि के दौरान किसी भी कथित संविदा के तहत लिए ऐसे किसी माल का परिदान करने के लिए उत्तरदायी नहीं थे, जिसके संबंध में रिट याचिकाकर्ताओं को कोई स्वामित्व प्रदान नहीं किया गया था। यह विनिर्दिष्ट रूप से प्रत्याख्यान किया गया था कि समान परिस्थितियों में अन्य

व्यापारियों को प्रबंध-ग्रहण से पूर्व की अवधि की संविदाओं के संबंध में कोई माल परिदत्त किया गया था, और इस संबंध में एकसमान दृष्टिकोण अपनाया गया था। प्रबंध-ग्रहण से पूर्व की अवधि के किसी भी कथित शेष माल के संबंध में कोई बीजक नहीं बनाया गया था। यह भी तर्क दिए गए कि रिट याचिकाकर्ताओं द्वारा किया गया भुगतान, यदि कोई हो, वास्तव में पूर्ववर्ती कंपनी को किया गया था और रिट याचिकाकर्ता उनसे यह राशि वसूलने के लिए स्वतंत्र थे, परन्तु प्रत्यर्थीगण किसी प्रकार की राशि का पुनर्भुगतान या किसी माल को परिदत्त करने के लिए उत्तरदायी नहीं थे। यह भी दावा किया कि प्रत्यर्थीगण को प्रबंध-ग्रहण से पूर्व की अवधि के किसी भी प्रकार के दायित्व से मुक्त कर दिया गया था। रिट याचिकाओं में लगाए गए अन्य आरोपों का भी प्रत्याख्यान किया गया।

5. शपथ-पत्रों के आदान-प्रदान के पश्चात 14.6.1990 को विद्वान एकल न्यायाधीश के समक्ष रिट याचिका की सुनवाई शुरू हुई और अंततः 5.12.1990 को निर्णय सुरक्षित रख लिया गया। हालाँकि, काफी समय के बाद रिट याचिका विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा जारी कर दी गई। इसके कुछ समय पश्चात 1995 में रिट याचिकाकर्ताओं ने अध्यक्ष एवं प्रबंध निदेशक, नेशनल टेक्सटाइल कॉरपोरेशन द्वारा कथित रूप से संयुक्त सचिव, वस्त्र मंत्रालय, भारत सरकार को सम्बोधित कर लिखे गए पत्र दिनांक 24.10.1989 को रिकॉर्ड पर लाने के उद्देश्य से एक अनुपूरक शपथ-पत्र

दायर करने की प्रार्थना की। अपीलार्थीगण द्वारा इस प्रार्थना का पुरज़ोर विरोध किया गया। विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा आदेश दिनांक 17.1.1995 द्वारा एक अनुपूरक शपथ-पत्र तथा विपक्षी शपथ-पत्र, यदि कोई हो, दायर करने की अनुमति दी गयी। इसके पश्चात रिट याचिकाकर्ताओं ने एक शपथ-पत्र प्रस्तुत किया जिसमें दिनांक 24.10.1989 के एक पत्र की प्रति संलग्न की गई थी, जो कथित तौर पर श्री सुंदरम, अध्यक्ष एवं प्रबंध निदेशक, नेशनल टेक्सटाइल कॉरपोरेशन द्वारा श्री बी सप्तऋषि, संयुक्त सचिव, वस्त्र मंत्रालय, भारत सरकार को लिखा गया था। पत्र में रिट याचिकाकर्ताओं और दो अन्य फर्मों द्वारा फिनले मिल्स और गोल्ड मोहर मिल्स द्वारा प्रबंध-ग्रहण से पूर्व की संविदा के विरूद्ध सूती कपड़े के परिदान के संबंध में किए गए अभ्यावेदन का संदर्भ दिया गया है। इसमें कथित किया गया है कि मामले की उनके स्तर पर जांच की गई थी और पक्षकार के अनुसार और मिलों के अनुसार शेष संविदा की स्थिति पत्र के साथ संलग्न अनुबंध-ए में वर्णित थी। इसमें आगे उल्लेख किया गया है कि उक्त स्थिति को पूरी तरह से सही प्रमाणित नहीं किया जा सका क्योंकि अधिकांश मूल अभिलेख व प्रलेख सीबीआई के कब्जे में थे। इसमें यह भी कथित है कि प्रबंधन का कार्यभार संभालने के बाद, किसी भी समय अतिरिक्त संरक्षक द्वारा किसी भी प्रदाय हेतु संविदा को रद्द या परिवर्तित नहीं किया गया। यदि अनुरोध पर विचार किया जाए, तो समान रूप से

स्थित सभी पक्षों के साथ सामान ही व्यवहार करना होगा और तदनुसार आठ प्रबंध-ग्रहीत कपड़ा मिलों के 224 पक्षकारों को बिना किसी मांग के 101.72 लाख रुपये की सीमा तक का परिदान करना होगा। पत्र के अंत में कहा गया है कि हालांकि पक्षकार ने तुरंत विवाद उठाया था, लेकिन छः साल के अंतराल के बाद अब किसी पक्षकार के दावे को स्वीकार किया जाना चाहिए या नहीं, इससे औचित्य तथा एनटीसी को 40.70 लाख रुपये के नुकसान का मुद्दा उठ जाता है। पत्र के अंतिम भाग में यह उल्लेख किया गया है कि यद्यपि पक्षकार ने एक काफी विवादास्पद मामला उठाया था, इस सम्बन्ध में कार्यवाही का सबसे अच्छा तरीका मामले में न्यायिक निर्णय प्राप्त करना होगा ताकि भविष्य में किसी भी अंकेक्षण या औचित्य के दृष्टिकोण से संभावित आपत्ति से बचा जा सके। पत्र के अनुलग्नक में 18.10.89 को रिट याचिकाकर्ताओं का क्रेडिट बैलेंस फिनेले मिल्स के विरूद्ध 10,47,145.33 रुपये तथा गोल्ड मोहर मिल्स के मुकाबले 21,89,056.26 रुपये दिखाया गया था।

6. उपरोक्त अनुपूरक शपथ-पत्र के जवाब में एक शपथ-पत्र दायर किया गया था और यह कथित किया गया था कि रिट याचिकाकर्ताओं द्वारा पत्र दिनांक 24.10.1989 का सख्त प्रमाण प्रस्तुत किया जाए क्योंकि उनके द्वारा बिना कोई कारण बताये यह आरोप लगाया गया था कि श्री सुंदरम ने उन्हें यह पत्र भेजा था। यह पत्र एक गोपनीय आंतरिक संचार था और श्री

सुंदरम के लिए इसकी एक प्रति रिट याचिकाकर्ताओं को देने का कोई अवसर नहीं था, खासकर तब जब उन्होंने (श्री सुंदरम) दिसंबर, 1992 में नेशनल टेक्सटाइल कॉरपोरेशन (दक्षिण महाराष्ट्र) लिमिटेड की नौकरी छोड़ दी थी। यह पत्र ज़्यादा से ज़्यादा श्री सुंदरम की टिप्पणी या राय ही था, और महान्यायवादी की कथित संविदाओं के असली नहीं होने सम्बन्धी राय के विपरीत था। महान्यायवादी की राय की एक प्रति भी संलग्न की गई थी। यह भी तर्क दिया गया कि भारत सरकार ने रिट याचिकाकर्ताओं के कथित दावे को स्वीकार नहीं किया था, बल्कि प्रत्यर्थी संख्या 4 के प्रधान अधिकारी के विरूद्ध प्रबंध-ग्रहण की दिनांक के पश्चात कई पक्षों को स्टॉक परिदत्त करने के लिए अभियोजन भी शुरू किया था। यह भी कथन किये गए कि उक्त पत्र को किसी भी परिस्थिति में रिट याचिकाकर्ताओं के कथित दावे को स्वीकृत किये जाने की परिभाषा नहीं दी जा सकती।

7. विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा यह माना गया कि रिट याचिकाकर्ताओं द्वारा जिस संविदा पर आश्रित हुआ जा रहा था, वह संदिग्ध था क्योंकि इसमें संबंधित मिलों द्वारा सहमति प्रकट किये जाने का कोई संकेत नहीं था। क्या विक्रय संविदाएं कथित रूप से किए गए थे व क्या संबंधित मिलों द्वारा उनके अनुसरण में कार्रवाई की गयी थी, यह एक तथ्य का प्रश्न है जिसे साक्ष्य प्रस्तुत कर प्रमाणित किया जाना था। संविदाओं को साबित करने के लिए प्रकरण के अभिलेख पर कोई साक्ष्य विद्यमान नहीं

था। इसी प्रकार रिट याचिकाकर्ताओं द्वारा स्वतंत्र रूप से यह स्थापित करने का कोई प्रयास नहीं किया गया कि 40 लाख रुपये से अधिक की राशि संबंधित मिलों के खाते में जमा थी। वास्तव में रिट याचिका में इस आशय का कोई कथन नहीं था और इस अग्रिम भुगतान का कोई विवरण प्रस्तुत नहीं किया गया था। यह भी माना गया कि जिन बीजकों पर आश्रित हुआ जा रहा था, उन्हें बनाये जाने के समय रिट याचिका के प्रत्यर्थीगण इस मामले का हिस्सा नहीं थे और यह प्रबंधन था जिसके पास प्रबंध-ग्रहण से पूर्व की अवधि के दौरान संबंधित मिलों का नियंत्रण था, और इसलिए, ऐसी परिस्थितियों में रिट याचिकाकर्ताओं द्वारा तथ्यों को सिद्ध किया जाना था, परन्तु उनके द्वारा सितंबर,1983 के संबंधित मिलों के पत्र पर आश्रित होने के अलावा अन्य कोई प्रयास नहीं किया गया। विद्वान एकल न्यायाधीश ने यह माना कि उन्होंने रिट याचिकाकर्ताओं को लंबित संविदाओं की मूल प्रति प्रस्तुत करने का निर्देश दिया था, लेकिन वे उक्त निर्देश का पालन करने में विफल रहे। उनके द्वारा मात्र सूती कपड़े के विक्रय संविदा की एक जीरोक्स प्रति सौंपी गयी, जिसमें केवल क्रेता के हस्ताक्षर थे, विक्रेता के नहीं। यह ज़ीरॉक्स कॉपी एक मुद्रित प्रारूप की थी जिसमें "द गोल्ड मोहुर" शब्द मुद्रित शब्द "मिल्स लिमिटेड" के पहले टाइप किया गया था। यहां तक कि इस दस्तावेज़ में अग्रिम के रूप में किए गए किसी भी भुगतान का कोई उल्लेख नहीं था, न ही यह उल्लेख किया गया था कि मिलों के

पास पड़े किसी भी शेष क्रेडिट को संविदा के लिए विनियोजित किया जाना चाहिए। विद्वान न्यायाधीश द्वारा यह माना गया कि प्रत्यर्थीगण ने नवंबर, 1984 में माल परिदत्त करने के अपने दायित्व से इनकार कर दिया था, परन्तु रिट याचिका पांच साल से अधिक समय के बाद दायर की गई थी, तथा यदि परिसीमा अवधि एक सिविल वाद प्रस्तुत करने की भी मानी जाए, उस स्थिति में भी रिट याचिका परिसीमा अवधि से वर्जित थी। विद्वान् न्यायाधीश द्वारा इस अधिनियम की धारा 3 की उपधारा 7, तथा धारा 6 व 11, व अन्य प्रावधानों के प्रभाव पर विस्तार से विचार किया गया और माना कि व्यवसाय के प्रबंधन से संबंधित सभी संविदाएं तथा कपड़ा उपक्रम के मामलों के प्रबंधन से संबंधित सभी संविदाएं नियत तिथि पर समाप्त हो चुके थे, और परिणामस्वरूप, केंद्र सरकार या संरक्षक न तो परिदान करके संविदात्मक दायित्वों का निर्वहन करने के लिए बाध्य थे, और न ही वे कथित अग्रिम भुगतानों को समायोजित करने के लिए बाध्य थे। पत्र दिनांक 24.10.1989 के संबंध में यह माना गया कि इस पत्र में ही यह उल्लेख मौजूद है कि उसमें वर्णित तथ्यों को अधिकांश मूल अभिलेखों व प्रलेखों को सीबीआई द्वारा जब्त किये जाने व उनके कब्ज़े में होने के कारण सत्यापित नहीं किया जा सकता। इसके अलावा इस पत्र का उद्देश्य किसी भी दायित्व या कर्त्तव्य को स्वीकार करना नहीं था, बल्कि एक राय व्यक्त की गई थी कि कार्यवाही का सबसे अच्छा तरीका मामले में न्यायिक

निर्णय प्राप्त करना था। अंत में, विद्वान एकल न्यायाधीश ने यह माना कि वाद-हेतुक बॉम्बे में उत्पन्न हुआ था, और इसी कारण कलकत्ता उच्च न्यायालय के पास रिट याचिका पर विचार करने का कोई क्षेत्राधिकार नहीं था। इन निष्कर्षों के साथ रिट याचिका खारिज कर दी गई।

8. विद्वान एकल न्यायाधीश के निर्णय व आदेश से व्यथित रिट याचिकाकर्ताओं द्वारा कलकत्ता उच्च न्यायालय की खंड पीठ के समक्ष अपील दायर की गयी। खंड पीठ ने यह माना कि कलकत्ता उच्च न्यायालय के पास इस मामले को सुनने का क्षेत्राधिकार है क्योंकि वाद-हेतुक भागतः वहां उत्पन्न हुआ था। गुणावगुण पर पर यह माना गया कि आमतौर पर किसी संविदा की विनिर्दिष्ट अनुपालना के लिए परमादेश जारी नहीं किया जा सकता है, फिर भी ऐसा करने पर कोई आत्यंतिक वर्जन नहीं है। खंड पीठ द्वारा यह भी माना गया कि वास्तव में कोई संविदा अस्तित्व में थी या नहीं, यह तथ्य का प्रश्न होगा, और यह ध्यान में रखते हुए कि संविदा की अनुपालना करना राज्य का वैधानिक कर्तव्य है, अपील को निम्न निर्देशों के साथ निस्तारित किया गया:

> "इस प्रकृति की स्थिति में, हमारी राय है कि यदि अध्यक्ष-सह-प्रबंध निदेशक के पद पर वर्तमान पदाधिकारी याचिकाकर्ताओं को सुनवाई का अवसर देते हैं और मतभेदों को पहले ही सुलझाने का प्रयास करते हैं तो न्याय के हित

की रक्षा होगी।" मेज पर पार्टियां। हमारा इस मामले के गुण-दोष पर जाने का इरादा नहीं है ताकि किसी न किसी तरह से यह निष्कर्ष निकाला जा सके कि अनुबंध का अस्तित्व साबित हुआ था या नहीं, लेकिन राहतों को ढालकर, हमारी राय है कि भले ही यह पाया गया कि प्रतिवादी नंबर 2 के लिए याचिकाकर्ताओं को सामान की आपूर्ति करना संभव नहीं है, हमारे मन में कोई संदेह नहीं है कि इस घटना में यह पाया गया कि उसके हाथ में 40 लाख रुपये की राशि पड़ी हुई है। इसके रिफंड के लिए यथाशीघ्र और 12% प्रति वर्ष की दर से ब्याज के भुगतान पर कदम उठाए जाने चाहिए।"

9. अपीलार्थीगण की ओर से उपस्थित विद्वान महान्यायभिकर्ता श्री किरीत एन. रावल द्वारा ज़ोर देकर आग्रह किया गया है कि कलकत्ता में वाद-हेतुक का कोई भाग उत्पन्न नहीं हुआ है क्योंकि वस्त्र मिलें बॉम्बे में स्थित थीं और प्रदाय बॉम्बे में स्थित कारखाने में किया जाना था, और रिट याचिकाकर्ताओं द्वारा कथित भुगतान भी उक्त स्थान पर किया गया था। इस प्रकार यह आग्रह किया गया है कि यह ऐसा प्रकरण नहीं है जहां वाद-हेतुक का कोई भी भाग पश्चिम बंगाल राज्य में उत्पन्न हुआ हो जो कि कलकत्ता उच्च न्यायालय को रिट याचिका पर विचार करने और कोई

अनुतोष प्रदान करने हेतु सक्षम बनाये। यहां प्रत्यर्थीगण (रिट याचिकाकर्ताओं) की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री जी सी भारुका ने तर्क दिया है कि रिट याचिकाकर्ता कलकत्ता में कारोबार कर रहे थे, उनके द्वारा कलकत्ता से पत्र भेजे गए थे और उनके जवाब भी उन्हें कलकत्ता में प्राप्त हुए थे, और इसलिए, वाद-हेतुक भागतः पश्चिम बंगाल राज्य में उत्पन्न हुआ था और परिणामस्वरूप, उच्च न्यायालय की खंड पीठ द्वारा लिया गया दृष्टिकोण कि उसे रिट याचिका पर विचार करने का क्षेत्राधिकार था, पूरी तरह से सही था।

10. संविधान के अनुच्छेद 226 के खंड (2) के अंतर्गत उच्च न्यायालय द्वारा किसी सरकार, प्राधिकारी या व्यक्ति को निदेश, आदेश या रिट निकालने की शक्ति का प्रयोग उन राज्यक्षेत्रों के संबंध में, जिनके भीतर ऐसी शक्ति के प्रयोग के लिए वादहेतुक पूर्णतः या भागतः उत्पन्न होता है, इस बात के होते हुए भी किया जा सकेगा कि ऐसी सरकार या प्राधिकारी का स्थान या ऐसे व्यक्ति का निवास स्थान उन राज्यक्षेत्रों के भीतर नहीं है। सिविल कार्यवाही में समझे जाने वाले वाद-हेतुक का अर्थ हर उस तथ्य से है, जिसे वादी द्वारा न्यायालय से अपने पक्ष में निर्णय लेने के अधिकार के समर्थन में सिद्ध करना आवश्यक होगा। इसे अलग तरीके से कहें तो यह उन तथ्यों का पुलिंदा है जो उन पर लागू विधि के साथ वादी को प्रतिवादी के विरूद्ध अनुतोष का अधिकार प्रदान करता है।

संविधान के अनुच्छेद 226 के खंड (2) के संदर्भ में भारत संघ बनाम अडानी एक्सपोर्ट्स, AIR (2002) SC 126 में यह स्पष्ट किया गया है कि रिट याचिका में कथित प्रत्येक तथ्य से यह निष्कर्ष पर नहीं निकाला जा सकता कि उन तथ्यों से न्यायालय के क्षेत्राधिकार के भीतर वाद-हेतुक उत्पन्न होता है, जब तक कि उन कथित तथ्यों का प्रकरण में लिप्त मामले के साथ कोई संबंध या प्रासंगिकता न हो। जिन तथ्यों का प्रकरण में लिप्त मामले या विवाद से कोई व्यवहार नहीं है, उनसे वाद-हेतुक उत्पन्न नहीं होता है जिससे कि संबंधित न्यायालय को क्षेत्राधिकार प्राप्त हो सके। इसी तरह के प्रश्न की जांच राजस्थान राज्य बनाम मैसर्स स्वेका प्रॉपर्टीज, AIR (1985) SC 1289 में की गई थी। यहां एक कंपनी, जिसका पंजीकृत कार्यालय कलकत्ता में था, की कुछ संपत्तियों को जयपुर में अधिग्रहित करने की मांग की गई थी तथा कंपनी को कलकत्ता में राजस्थान शहरी सुधार अधिनियम की धारा 52 के अंतर्गत एक नोटिस दिया गया था। इसमें उत्पन्न विचाराधीन प्रश्न यह था कि क्या कलकत्ता में कंपनी के मुख्य कार्यालय में नोटिस की तामील से पश्चिम बंगाल राज्य में वाद-हेतुक उतपन्न होता है जिससे कि जयपुर में संचालित की गयी अधिग्रहण कार्यवाही को चुनौती देने वाले प्रकरण का क्षेत्राधिकार कलकत्ता उच्च न्यायालय को प्राप्त हो। यह माना गया कि राजस्थान अधिनियम की धारा 152 के तहत भूमि के अधिग्रहण में परिणत होने वाला वाद-हेतुक

राजस्थान उच्च न्यायालय के क्षेत्राधिकार में उत्पन्न हुआ, और कंपनी के लिए यह आवश्यक नहीं था कि इस अधिनियम की धारा 52 के तहत राजस्थान सरकार द्वारा उन्हें जारी नोटिस को रद्द करने हेतु संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत उचित रिट, आदेश या निर्देश देने के लिए यह तर्क दे की नोटिस की तामील कलकाता में की जाए। इस प्रकार यह माना गया कि कलकत्ता उच्च न्यायालय के पास रिट याचिका पर विचार करने का कोई क्षेत्राधिकार नहीं था।

11. क्षेत्राधिकार का प्रश्न पर ऑयल एंड नेचुरल गैस कमीशन बनाम उत्पल कुमार बसु, [1994] 4 SCC 711 मामले में काफी विस्तार से विचार किया गया था, और यह माना गया कि मात्र इसलिए कि रिट याचिकाकर्ता ने निविदा पेश की थी और निविदाएं आमंत्रित करने वाले एक विज्ञापन के जवाब में कलकत्ता से अभ्यावेदन दिया था, जिस पर नई दिल्ली में विचार किया जाना था और कार्य हजीरा (गुजरात) में किया जाना था और कलकत्ता में फैक्स संदेशों के उत्तर भी प्राप्त हुए थे, वे तथ्य नहीं गठित हों जाते जो कि वाद-हेतुक का अभिन्न अंग बन जाएँ। यह भी माना गया कि रिट याचिकाकर्ता के पश्चिम बंगाल राज्य में रहने या एक पंजीकृत कार्यालय से कारोबार करने के आधार पर उच्च न्यायालय क्षेत्राधिकार ग्रहण नहीं कर सकता।

12. हस्तगत प्रकरण में वस्त्र मिलें बॉम्बे में स्थित हैं और कपड़े का प्रदाय उनके द्वारा बॉम्बे में स्थित कारखाने पर किया जाना था। रिट याचिकाकर्ताओं के अनुसार पैसे का भुगतान बॉम्बे स्थित मिलों को किया गया था। विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा मामले पर विस्तृत चर्चा के बाद यह माना गया कि कलकत्ता उच्च न्यायालय के पास रिट याचिका पर विचार करने का कोई क्षेत्राधिकार नहीं था। खंड पीठ ने इस निष्कर्ष को इस आधार पर उलट दिया कि संपन्न संविदा अस्तित्व में आ गयी थी जिसे सुनवाई का अवसर देने के पश्चात ही रद्द किया जा सकता है, और परिणामस्वरूप, उसके कलकत्ता पते पर संविदा को रद्द करने का प्रश्न वाद-हेतुक गठित करेगा। हमारे मत में खंड पीठ द्वारा लिया गया दृष्टिकोण विधिक रूप से पूरी तरह त्रुटिपूर्ण है। रिट याचिका में यह कहीं भी कथित नहीं किया गया है कि अपीलार्थी द्वारा संविदा रद्द करने के लिए रिट याचिकाकर्ता को कोई नोटिस जारी करके इस अधिनियम की धारा 11 के अंतर्गत कोई कार्रवाई अमल में लायी गयी थी। दरअसल, याचिका के मद सं 18 में कथित है है कि केंद्र सरकार ने संविदा रद्द करने के लिए धारा 11 में निर्धारित प्रक्रिया का पालन नहीं किया। कलकत्ता उच्च न्यायालय के क्षेत्राधिकार के संबंध में प्रासंगिक कथन रिट याचिका के मद सं 73 में किया गया था जिसमें निम्नानुसार कथन किया गया था:

"73. आपका याचिकाकर्ता व्यवसाय करता है और अधिकार क्षेत्र के भीतर व्यवसाय के उपरोक्त स्थान पर सभी खाते रखता है। आपके याचिकाकर्ता का कहना है कि उपरोक्त के कारण, आपके याचिकाकर्ताओं को अधिकार क्षेत्र के भीतर व्यवसाय के उक्त स्थान पर नुकसान और क्षति हुई है। आपके याचिकाकर्ता को संबोधित यहां ऊपर उल्लिखित सभी नोटिस और पत्राचार आपके याचिकाकर्ता द्वारा अधिकार क्षेत्र के भीतर आपके याचिकाकर्ता के व्यवसाय के स्थान पर प्राप्त किए गए हैं। इन परिस्थितियों में इस माननीय न्यायालय के पास वर्तमान आवेदन पर विचार करने का अधिकार क्षेत्र है।"

जैसा कि पूर्व में चर्चा कि गयी है, मात्र यह तथ्य कि रिट याचिकाकर्ता कलकत्ता में कारोबार करता है या उसके द्वारा किए गए पत्राचार का जवाब कलकत्ता में प्राप्त हुआ था, वाद-हेतुक का अभिन्न अंग नहीं है, और इसलिए कलकत्ता उच्च न्यायालय के पास रिट याचिका पर विचार करने का कोई क्षेत्राधिकार नहीं था, और खंड पीठ द्वारा इसके विपरीत लिया गया दृष्टिकोण पोषणीय नहीं है। उपरोक्त निष्कर्ष को दृष्टिगत रखते हुए रिट याचिका खारिज किये जाने योग्य है, परन्तु

पक्षकारों को आगे किसी भी उत्पीड़न से बचाने और मुकदमेबाजी को समाप्त करने के लिए हम गुणावगुण के आधार पर भी मामले का परीक्षण करेंगे।

13. कपड़ा उपक्रम (प्रबंध-ग्रहण) अधिनियम, 1983 का अध्याय 2 कुछ कपड़ा उपक्रमों के प्रबंध-ग्रहण करने से संबंधित है। धारा 3 की उप-धारा (1) में कहा गया है कि नियत दिन से ही सभी कपड़ा उपक्रमों का प्रबंधन केंद्र सरकार में निहित होगा। धारा 3 की उपधारा (7) महत्वपूर्ण है और यह निम्न प्रकार प्रावधानित करती है:

धारा 3(7): संदेह को दूर करने के लिए, यह घोषित किया जाता है कि नियत दिन से पहले कपड़ा उपक्रम के संबंध में एक कपड़ा कंपनी द्वारा किया गया कोई भी दायित्व संबंधित कपड़ा कंपनी के खिलाफ लागू किया जाएगा, न कि केंद्र सरकार या के खिलाफ। संरक्षक.

यह प्रावधान बहुत स्पष्ट है और निश्चित शब्दों में कहता है कि कपड़ा उपक्रम के संबंध में कपड़ा कंपनी द्वारा उपगत कोई भी दायित्व केंद्र सरकार या संरक्षक के विरूद्ध प्रवर्तनीय नहीं होगा। इस प्रावधान के प्रभाव की राष्ट्रीय मिल मजदूर संघ बनाम नेशनल टेक्सटाइल कॉरपोरेशन *(*दक्षिण महाराष्ट्र*)* लिमिटेड, [1996] 1 SCC 313 में जांच की गयी थी, जहां एक ऐसे कर्मचारी की उपदान के संदाय का प्रश्न विचारणीय था जिसने "नियत दिन" से कुछ महीने पहले रोजगार छोड़ दिया था। यह माना गया कि धारा

3 की उपधारा (7) की भाषा स्पष्ट और ज़ाहिर है क्योंकि उक्त प्रावधान में यह घोषित किया गया है कि नियत दिन से पहले कपड़ा उपक्रम के संबंध में कपड़ा कंपनी द्वारा उपगत कोई भी दायित्व संबंधित कपड़ा कंपनी के विरुद्ध प्रवर्तनीय होगा, न कि केंद्र सरकार या संरक्षक के विरुद्ध। यह भी माना गया कि नियत दिन से पहले कपड़ा उपक्रम के संबंध में कपड़ा कंपनी द्वारा उपगत प्रत्येक दायित्व धारा 3 की उप-धारा (7) में प्रयुक्त "कोई भी दायित्व" शब्द, जिसका कि व्यापक आयाम है, की परिधि में आता है। न्यायालय ने इस प्रकार इस तर्क को खारिज कर दिया कि धारा 3 की उप-धारा (7) को इस प्रकार समझा जाना चाहिए कि उपदान संदाय अधिनियम के तहत उपदान के संदाय के दायित्व के संबंध में इस प्रावधान की प्रयोज्यता नहीं होगी। न्यायालय ने कपड़ा उपक्रम (राष्ट्रीयकरण) अध्यादेश, 1995 (1995 का अध्यादेश संख्यांक 6) के प्रावधानों की भी जांच की, जिसे बाद में कपड़ा उपक्रम (राष्ट्रीयकरण) अधिनियम, 1995 द्वारा प्रतिस्थापित किया गया और निम्नानुसार माना गया:

> "1995 के अध्यादेश 6 के प्रावधानों से यह भी पता चलता है कि प्रबंधन के अधिग्रहण से पहले की अवधि के लिए देनदारियों को उपक्रम के अधिग्रहण के लिए कपड़ा उपक्रम के मालिक को देय राशि से मुक्त किया जाना है, न कि उपक्रम द्वारा एनटीसी। इसलिए, अपीलकर्ता की ओर से

आग्रह किए गए तर्क को बरकरार रखना संभव नहीं है कि एनटीसी प्रतिवादी 2 को ग्रेच्युटी भुगतान अधिनियम के तहत देय ग्रेच्युटी राशि के संबंध में उत्तरदायी है।"

14. इसलिए, विधिक स्थिति बिल्कुल स्पष्ट है कि नियत दिन से पहले कपड़ा उपक्रम के संबंध में किसी कपड़ा कंपनी द्वारा उपगत कोई भी दायित्व केंद्र सरकार या संरक्षक के विरूद्ध प्रवर्तनीय नहीं हों सकता है। रिट याचिकाकर्ताओं द्वारा कायम प्रकरण के अनुसार उनके द्वारा नियत दिन से पूर्व दो कपड़ा मिलों को पैसे का भुगतान किया गया था, लेकिन वे कपड़े का प्रदाय करने में विफल रहे थे। यदि उपरोक्त स्थिति को सही माना जाए, तो पैसे प्राप्त होने के पश्चात कपड़ा मिलों द्वारा देनदारी का दायित्व उपगत होने के कारण रिट याचिकाकर्ताओं को कपड़े का प्रदाय करने का कर्त्तव्य था। प्रस्तुत तथ्यों के अनुसार कपड़ा कंपनी द्वारा उपगत दायित्व था, और परिणामस्वरूप, यह केंद्र सरकार या संरक्षक के विरूद्ध प्रवर्तनीय नहीं हों सकता था। इस कारण हम उच्च न्यायालय की खंडपीठ के इस दृष्टिकोण को स्वीकार करने में असमर्थ हैं कि यह कपड़ा कंपनी का दायित्व नहीं था।

15. उच्च न्यायालय के समक्ष अपीलार्थीगण द्वारा दायर काउंटर शपथ-पत्र के मद सं 7 और 9 में अनुबंध ए की यथार्थता का प्रत्याख्यान विनिर्दिष्ट रूप से किया गया था। मद सं 15 और 16 में यह स्पष्ट रूप से तर्क दिया गया था कि नियत दिन पर रिट याचिकाकर्ताओं के लिए निर्मित

और चिन्हित कोई भी सामान मिलों में नहीं पड़ा था। मद सं 21, 22, 24 और 27 में याचिकाकर्ताओं द्वारा कथित तौर पर किए गए भुगतान की प्राप्ति का भी प्रत्यख्यान किया गया था। चूंकि अपीलार्थीगण द्वारा नियत दिन पर किसी भी भुगतान की प्राप्ति या रिट याचिकाकर्ताओं के लिए किसी भी निर्मित और चिन्हित कपड़े के अस्तित्व का विनिर्दिष्ट रूप से प्रत्याख्यान किया गया है, इसलिए संविधान के अनुच्छेद 226 के अंतर्गत कार्यवाही में रिट याचिकाकर्ताओं को कोई अनुतोष प्रदान नहीं किया जा सकता है। विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा सही अवलोकन किया गया था कि रिट याचिका में तथ्य के अतिविवादग्रस्त प्रश्न उठाए गए थे जो कि एक उचित रूप से गठित वाद में साक्ष्य प्रस्तुत कर सिद्ध किये जा सकते थे, व जिस मामले की जांच रिट याचिका में नहीं की जा सकती थी।

16. यहां अपीलार्थियों ने श्री वी. सुंदरम, अध्यक्ष एवं प्रबंध निदेशक, एनटीसी द्वारा संयुक्त सचिव, वस्त्र मंत्रालय, भारत सरकार को 24.10.1989 को लिखे गए कथित पत्र की सत्यता को भी विवादित किया था। उल्लेखनीय है कि हालांकि यह पत्र अक्टूबर 1989 का है, लेकिन इसे अनुपूरक शपथ-पत्र के साथ 27.1.1995 को दायर किया गया था, यानी कि दिसंबर 1989 में रिट याचिका दायर करने के 5 साल से अधिक समय के पश्चात। श्री सुंदरम ने 1992 में नौकरी छोड़ दी थी। जैसा कि पत्र से दर्शित है, यह नेशनल टेक्सटाइल कॉर्पोरेशन के अध्यक्ष और संयुक्त सचिव, वस्त्र

मंत्रालय, भारत सरकार के बीच एक आंतरिक पत्राचार था। इस पत्र से यह नहीं दर्शित होता है कि इसकी प्रति रिट याचिकाकर्ताओं को तो दूर, किसी और को भी भेजी गई हो। महेंद्र कुमार गोयनका द्वारा दायर अनुपूरक शपथ-पत्र के मद सं 4 में यह कथित किया गया था कि उनके अनुरोध पर श्री सुंदरम द्वारा दयाभाव से याचिकाकर्ता को उक्त पत्र दिनांक 24.10.1989 की एक प्रति सौंपी गयी थी। यह विश्वास करना अत्यंत मुश्किल है कि हालांकि श्री सुंदरम ने 1992 में नौकरी छोड़ दी थी, परन्तु उन्होंने उक्त पत्र की एक प्रति अपने पास रखी थी और 1995 में वह श्री गोयनका को सौंप दी थी। श्री सुंदरम, जो एक आईएएस अधिकारी थे व नेशनल टेक्सटाइल कॉरपोरेशन के अध्यक्ष एवं प्रबंध निदेशक के बहुत ही जिम्मेदार पद पर थे, से यह अपेक्षा नहीं की जाती है कि वह आधिकारिक दस्तावेजों की निजी प्रतियां रखें और न ही उसे किसी निजी पक्षकार को सौंपें। इसलिए, हमारा मत यह है कि विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा लिया गया यह दृष्टिकोण कि उक्त दस्तावेज़ अत्यंत संदिग्ध प्रकृति का है और उस पर आश्रित नहीं हुआ जा सकता, पूरी तरह से सही है।

17. हम विद्वान एकल न्यायाधीश के इस दृष्टिकोण से भी सहमत हैं कि दिसंबर 1989 में दायर की गई रिट याचिका अत्यधिक विलम्ब से दायर की गई थी क्योंकि रिट याचिकाकर्ताओं के दावे को नेशनल टेक्सटाइल कॉर्पोरेशन (दक्षिण महाराष्ट्र) की ओर से वित्त निदेशक ने पत्र

दिनांक 7.11.1990 के द्वारा स्पष्ट रूप से खारिज कर दिया गया था। इसलिए याचिका इसी आधार मात्र पर ही खारिज होने योग्य थी। इसके अतिरिक्त रिट याचिका में की गई प्रार्थना अपीलार्थी को माल (कपड़ा) का प्रदाय करने का निर्देश देने हेतु परमादेश जारी करने के लिए है। यह सुस्थापित है कि किसी अधिकारी को कुछ करने के लिए मजबूर करने के लिए एक परमादेश तब ही जारी किया जाना चाहिए, जब यह दर्शित किया गया हो कि एक विधि के अंतर्गत विधिक कर्तव्य थोपा गया है और पीड़ित पक्ष के पास इस विधि के अंतर्गत इस कर्त्तव्य की अनुपालना के प्रवर्तन का विधिक अधिकार है। हस्तगत प्रकरण एक शुद्ध एवं सरल व्यवसायिक संविदा का है। रिट याचिकाकर्ताओं के पास कोई वैधानिक अधिकार नहीं है और न ही अपीलार्थीगण पर कोई वैधानिक कर्तव्य थोपा गया है जिसकी अनुपालना का विधिक प्रवर्तन किया जा सकता हो। इसलिए, जैसा कि रिट याचिकाकर्ताओं ने प्रार्थना की है, कोई परमादेश रिट जारी नहीं किया जा सकता है।

18. उपर्युक्त वर्णित कारणों से हमारा मत है कि प्रत्यर्थी द्वारा दायर की गई रिट याचिका पूरी तरह से गुणरहित थी और इसे उच्च न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा सही खारिज किया गया था। तदनुसार अपील स्वीकार की जाती है। कलकत्ता उच्च न्यायालय की खंड पीठ के निर्णय व आदेश दिनांक 4.8.2000 के को अपास्त किया जाता है और

विद्वान एकल न्यायाधीश के निर्णय व आदेश को पुनर्स्थापित कर पुष्टि की जाती है। है। अपीलार्थी यहां के साथ-साथ उच्च न्यायालय में हुए व्यय का हकदार होगा।

वी.एस.एस. अपील स्वीकार की गयी

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल 'सुवास' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी करन सिंह (आर.जे.एस.) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।